संवाद दर्शन

सहयोग राशि-5/-

विक्रम संवत : 2083 | वर्ष : 2026

हिन्दी पाक्षिक

अंक : मई (प्रथम)

नए भारत के दिव्य पथिक

राम मंदिर का सपना हुआ पूरा

इसके बाद अयोध्या में श्रीराम जन्मभूमि पर भव्य एवं दिव्य मंदिर का निर्माण शुरू हो गया। 22 जनवरी, 2024 को पीएम मोदी ने भव्य समारोह में रामलला की प्राण प्रतिष्ठा की। अपने भाषण में उन्होंने इसे एक ऐतिहासिक और अद्‌भुत क्षण बताया, जो सदियों के इंतजार के बाद आया है। प्राण प्रतिष्ठा समारोह के दौरान, पीएम मोदी ने मंदिर निर्माण में योगदान देने वाले सभी कार्यकर्ताओं एवं श्रमिकों पर फूल बरसाकर उनका सम्मान किया था।

भारतीय जनता पार्टी के कार्यकर्ता और संघ के स्वयंसेवक के रूप में नरेंद्र मोदी ने राम मंदिर आंदोलन के दौरान 1989–1990 में रामशिला पूजन और राम रथ यात्रा में सक्रिय भूमिका निभाई थी। उसका उद्देश्य अयोध्या में राम मंदिर का निर्माण करना था। जब भारत के मतदाताओं ने उन्हें बहुमत दिया तब उन्होंने श्रीराम जन्मभूमि विवाद के सुलझाने के मार्ग से सारे बाधाओं को हटाया। न्यायालय से जब श्रीराम मंदिर निर्माण के पक्ष में फैसला आ गया, तब 5 अगस्त, 2020 को, प्रधानमंत्री के रूप में नरेंद्र मोदी ने खुद अयोध्या में राम मंदिर की आधारशिला रखी, जो सैकड़ों वर्षों के संघर्ष और भक्तों के इंतजार का सुफल था।

कश्मीर से अनुच्छेद 370 हटाना

जम्मू–कश्मीर को विशेष दर्जा देने वाले अनुच्छेद 370 को हटाया गया, यह मोदी सरकार की एक बड़ी उपलब्धि है। किसी ने कभी सोचा भी नहीं था कि कश्मीर से अनुच्छेद 370 हटाया जा सकता है, लेकिन मोदी सरकार ने कानूनी तरीके से अनुच्छेद 370 को हटाया और आज वहां इसका असर देखने को भी मिल रहा है। कश्मीर में आज रोजगार के साधन बढ़ रहे हैं।

संवाद दर्शन
हिन्दी पाक्षिक

सलाहकार संपादक
देवेन्द्र मिश्र

संपादक
संजीव कुमार

प्रकाशक एवं मुद्रक
बिमल कुमार जैन

प्रिंटर्स
लोकवाणी प्रिंटिंग प्रेस,
शशि काम्प्लेक्स,
नाला रोड, कदमकुआँ
पटना

पता
विश्व संवाद केंद्र
104-105, सूर्या अपार्टमेंट,
फ्रेजर रोड, पटना - 800 001
संपर्क = 0612 2216048

ई-मेल- vskpatna@gmail.com
vskbihar@gmail.com
वेबसाइट- www.vskbihar.com

अनुक्रमणिका

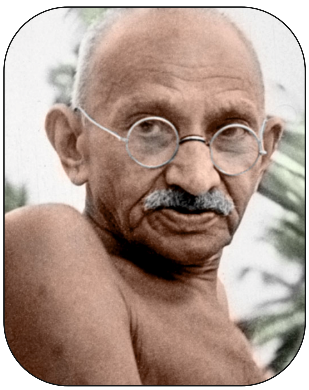

पाठकों के नाम पत्र

प्रिय पाठक,
सादर नमस्कार।

आशा है आप स्वस्थ एवं सानंद होंगे। विदित हो कि 'संवाद दर्शन' पत्रिका राष्ट्र तथा प्रदेश की घटनाओं और महत्वपूर्ण बिन्दुओं को आधार बनाकर प्रकाशित हो रही है। आपका स्नेह हमेशा प्राप्त होता रहता है। पत्रिका द्वारा सदस्यों/ पाठकों के नाम, पता, दूरभाष तथा ई–मेल में सुधार के लिए योजना चलायी जा रही है। संवाद दर्शन परिवार आशा करता है कि पत्रिका आप तक पहुंच रही होगी। यदि नहीं पहुंच रही है तो आप हमारे दूरभाष पर संपर्क कर या हमारे पते पर पत्र लिखकर अपने पता का सुधार करवा सकते हैं।

शेष शुभ!

नव भारत की परिकल्पना के केन्द्र में संस्कृति

भारत एक देश है। एक राष्ट्र है। अंग्रेजी भाषा में राष्ट्र के समानार्थक नेशन शब्द को माना गया है। लेकिन, अंग्रेजी के नेशन और हिंदी–संस्कृत के राष्ट्र शब्द के भावबोध और अर्थ में बहुत बड़ा मौलिक अंतर है। इस अंतर को ध्यान में रखते हुए भारतीय बुद्धिजीवियों ने यूरोप के संबंध में नेशन स्टेट कहना शुरू कर दिया है। भारत की ज्ञान परंपरा में देश शब्द का अर्थ यूरोप के स्टेट यानी राज्य या प्रदेश के नजदीक अर्थ वाला हो सकता है। नवभारत के सम्बंध में वर्तमान विमर्श के केंद्र में भारत राष्ट्र है। भारत राष्ट्र का मूल तत्व इसकी संस्कृति है। भारत राष्ट्र में कई राज्य थे, उन राज्यों के शासक भी अलग–अलग थे, उनके बीच युद्ध के भी प्रमाण हैं लेकिन इसके बावजूद भारत एक राष्ट्र था। हजारों वर्षों से विदेशी आक्रांताओं का आक्रमण झेलने के बावजूद भारत का अस्तित्व बरकरार है यानी भारत राष्ट्र वर्तमान समय में भी जीवित है। भारत राज्य की सीमा संकुचित हुई है लेकिन भारत राष्ट्र का मूल तत्व उसकी संस्कृति आज भी भारतीयों की चेतना में वर्तमान है। नव भारत की परिकल्पना के केंद्र में भारत राष्ट्र यानी भारत की संस्कृति है। भारत की संस्कृति यानी भारत के जन की चेतना का मूल तत्व जो प्राचीन काल से उसके व्यवहार और जीवन मूल्य को निर्देशित करती आ रही है। इसे भारतीय मनीषा ने हिंदुत्व संज्ञा दिया है। इसके व्यापक संदर्भों को देखते हुए भारत के सक्षम न्यायालयों ने अपने आदेश में हिंदुत्व को मजहब के दायरे से बाहर रखते हुए, इसे जीवन पद्धति बताया है।

नवभारत का सपना देखने वाली वैचारिक अधिष्ठान एवं उससे जुड़े विविध संगठनों का विगत सौ वर्षों से भारत को औपनिवेशिक मानसिकता के चंगुल से मुक्त कराने प्रयास चल रहा है। इसमें भारत के स्व को जागरित करते हुए भारत को सभी दृष्टि से समर्थ बनाने के संकल्प को सिद्ध करना प्रमुख है। आरएसएस के संस्थापक डा. केशव बलराम हेडगेवार ने इस स्वप्न को साकार करने के लिए जिस विचार बीज का अरोपण किया था वह अब पौधा से विशाल वृक्ष की रूप धारण कर चुका है। सौ वर्षों की यात्रा में आरएसएस के संगठन में युग की आवश्यकता के अनुरूप कई परिवर्तन हुए लेकिन इसका विचार और संकल्प नहीं बदला। अंग्रेजों से राजनीतिक आजादी के बाद भारतीयों के हाथ में शासन का बागडोर तो आ गया लेकिन अपने दो सौ वर्षों के शासन के दौरान अंग्रेजों ने भारतीयों के मनमस्तिष्क को जिस प्रकार से औपनिवेशिक मानसिकता के गुलाम बना दिया था, वह आजाद भारत में भी जारी रहा। इस मानसिकता के साथ संघ विचार परिवार का संघर्ष पिछले सौ वर्षों से जारी है। वर्तमान समय में यह द्वंद्व अब ग्लोबल मार्केट फोर्स, इवेजेलिक्ल फोर्स और रैडिकल इस्लामिक फोर्स के साथ जारी है। क्योंकि, औपनिवेशिक शक्ति के ऐजेंडे को भारत में जारी रखने की परियोजना को जमीन पर उतारने में ये इन तानों शक्तियों मिलकर लगी हुई हैं। ये नवभारत के रास्ते में बड़ी बाधाएं उत्पन्न करने के प्रयास में लगी हैं। पूर्वोत्तर भारत से लेकर भारत के पड़ोसी देशों में इनके द्वारा हाल में कराए गए उथल–पुथल इसके प्रमाण हैं। नवभारत में इनका यह सपना साकार नहीं हो सकता।

नए भारत के दिव्य पथिक

इस कालखंड में उन्होंने भारत को विकसित देशों की कतार में खड़ा करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। यह केवल भारत इस नए भारत के पीछे उत्प्रेरक की भूमिका में जो विचारधारा है वह विशुद्धरूप से भारतीय है। आरएसएस का मतलब भारत का राष्ट्रीय विचार। नए भारत ने अपनी आजादी का अमृत महोत्सव मनाने के साथ ही स्वयं को विकसित देशों की कतार में खड़ा करने का संकल्प ले लिया है। इस संकल्प को सिद्ध करने की दिशा में तेजी से अग्रसर भी है। इससे भी आगे भारत स्वयं को विश्वगुरु के पद पर पुनर्स्थापित करने की दिशा में पुरूषार्थ कर रहा है।

यह सही है कि विचार आधारित संगठन या राजनीतिक दल में व्यक्ति महत्वपूर्ण नहीं होते लेकिन व्यक्ति के माध्यम से विचारधारा व्यावहारिक धरातल पर उतरती है और प्रत्यक्ष दृष्टिगत होती है। इस अर्थ में वह व्यक्ति एक प्रतिमान (माडल) और प्रतीक बनकर बड़े समूह को प्रेरित करता है। उसके व्यवहार से उसका जीवन पथ अनुकरणीय हो जाता है।

इस कसौटी पर आरएसएस के सरसंघचालक डा मोहन भागवत और भारतीय जनता पार्टी के सर्वमान्य नेता व प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी एक आदर्श हैं। ऐसा इनके कटु विरोधी और आलोचक भी अब मानने लगे हैं। वर्तमान भारत के सामाजिक और राजनीतिक जीवन में दूर–दूर तक इन दोनों के समतुल्य या नजदीक कोई व्यक्ति खड़ा नहीं दिखता।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के अनुसार 2022 से लेकर 2047 तक की अवधि भारत के लिए अमृतकाल है। वर्ष 2022 में जब भारत की आजादी का 75वां वर्षगांठ अमृतमहोत्सव के रूप में बहुत धूमधाम से मना था तब पीएम मोदी के विरोधियों ने इसे मोदी ब्रांडिंग इवेंट कहकर इसका मजाक उड़ाया था तथा विभिन्न कार्यक्रमों का बहिष्कार भी किया था। अमृत महोत्सव उत्सव वर्ष यानी 2022–23 में ऐसा प्रयास किया गया जिससे भारतीयों में आत्मविश्वास जगे और सामूहिक शक्ति के प्रकटीकरण के अनुकूल सामाजिक वातावरण का निर्माण हो। इस तैयारी के साथ प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 2022 से लेकर 2047 तक के 25 वर्ष के कालखंड के लिए सभी भारतीयों के लिए एक लक्ष्य निश्चित कर दिया। नरेंद्र मोदी इसे अमृतकाल कहते हैं। अमृतकाल यानी पूरी शक्ति के साथ फिर से उठ खड़ा होने का काल। यह विचार व्यक्त करते हुए वे 140 करोड़ भारतीयों का आह्वान करते हैं। उनके इस आह्वान में पंथ, सम्प्रदाय, जाति, भाषा आदि के घेरे ध्वस्त होते दिखते है। इसका ही सार है सबका साथ, सबका विकास और सबका विश्वास। इस राजनीति का अंतिम परिणाम अल्पसंख्यक–बहुसंख्यक के सहारे तुष्टिकरण की राजनीति का समूल नाश होगा। की सरकार,

उसकी तंत्र, राजनीतिक दलों के सहयोग से सम्भव नहीं है। इसके लिए सम्पूर्ण भारत को एकजुट होकर लगना होगा। समाज यदि पूर्ण मनोयोग से इस संकल्प के साथ खड़ा नहीं होता तो यह कार्य पूर्ण नहीं हो सकता। इसके लिए ऐसे संगठन का सम्पूर्ण सहयोग आवश्यक है जो प्रतिदिन निःस्वार्थ बुद्धि से व्यक्ति निर्माण कार्य में लगा हो। वायु के समान अदृश्य लेकिन आवश्यकता पड़ने पर बड़े परिवर्तन में मुख्य भूमिका का निर्वहन करने में समर्थ हो।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी बार–बार यह बताने में संकोच नहीं करते कि उनके व्यक्तित्व की रचना संघ की शाखा में हुई है। बालपन से आज तक वे संघ को ही जीते हैं इसीलिए उनका सम्पूर्ण भारत माता को समर्पित है।

डा. मोहन भागवत के 75वें जन्मदिन के अवसर पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने स्वयं उनके व्यक्तित्व व कीर्ति पर एक लेख लिखा। प्रधानमंत्री का वह लेख भारत के प्रतिष्ठित समाचारपत्रों में प्रकाशित भी हुए। औपनिवेशिक मानसिकता वाले कई लोगों ने इसके लिए प्रधानमंत्री एवं पत्रकारिता को कोसा लेकिन इसके औचित्य और प्रासंगिकता को नकारने वाले तर्क नहीं दे सके।

महात्मा गांधी ने भारत के स्व के जागरण के माध्यम से अंग्रेजी सत्ता के चंगुल से भारत को मुक्त कराने का आंदोलन चलाया था। इसके परिणाम स्वरूप भारत को राजनीतिक आजादी मिली। लेकिन, आजादी के बाद भी भारत का तंत्र, शिक्षा व्यवस्था, न्याय व्यवस्था उस औपनिवेशिक मानसिकता की गुलाम रही।

नए भारत को राजनीतिक आजादी के बाद स्वतंत्र होने की आकांक्षा है। स्वतंत्र यानी भारतीय की संस्कृति–प्रकृति वाली तंत्र। आरएसएस के पिछले सौ साल के सतत प्रयास के परिणाम स्वरूप नए भारत में स्व के तंत्र की आकांक्षा जगी है। यहां के तंत्र को भारतीय मन और प्रकृति के अनुकूल बनाने की केवल बात ही नहीं हो रही है बल्कि उसे मूर्तरूप देने की दिशा में ठोस कदम उठाए जा रहे हैं।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने सरसंघचालक डा. मोहन भागवत के 75वें जन्मदिन के अवसर पर लेख के रूप में जो विचार व्यक्त किए उससे उन्होंने लाखों स्वयंसेवकों से सीधा संवाद स्थापित कर लिया। इससे भाजपा और संघ को लेकर मीडिया के माध्यम से बनाए गए नैरेटिव की हवा निकल गयी। अपना सम्पूर्ण न्योछावर कर भारत माता के परमगौरव की पुनर्स्थापना का सपना देखने वाले ये स्वयंसेवक रोज मानव परिवर्तन से व्यवस्था परिवर्तन की साधना में लगे हुए हैं। बीज से वटवृक्ष बनने की इस धीमी प्रक्रिया को शायद पश्चिमी दृष्टि से समझा नहीं जा सकता है। इसीलिए संघ की साधना से होने वाले परिवर्तनों को देख लोग आश्चर्य भरी नजरों से देखते है। नरेंद्र मोदी को भी ये आश्चर्य भरी नजरों से ही देखते है।

ऐसे में पीएम मोदी ने अपनी मातृ संगठन के अभिभावक डा.मोहन भागवत के सम्बंध में स्पष्ट विचार व्यक्त कर विश्वास के आधार को और पुख्ता बना दिया। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में लिखा कि संघ की यात्रा में भागवत जी का कार्यकाल संघ में सर्वाधिक परिवर्तन का कालखंड माना जाएगा। चाहे वो गणवेश परिवर्तन हो, संघ शिक्षा वर्गों में बदलाव हो, ऐसे अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन उनके निर्देशन में संपन हुए।

इस वर्ष की शुरुआत में नागपुर में उनके साथ माधव नेत्र चिकित्सालय के उद्घाटन के दौरान मैंने कहा था कि संघ अक्षयवट की तरह है जो राष्ट्रीय संस्कृति और चेतना को ऊर्जा देता है। इस अक्षयवट की जड़ें इसके मूल्यों की वजह से बहुत गहरी और मजबूत हैं। इन मूल्यों को आगे बढ़ाने में जिस समर्पण से मोहन भागवत जी जुटे हुए हैं वो हर किसी को प्रेरणा देता है।

समाज कल्याण के लिए संघ की शक्ति के निरंतर उपयोग पर मोहन भागवत जी का विशेष बल रहा है। इसके लिए उन्होंने पंच परिवर्तन का मार्ग

प्रशस्त किया है। इसमें स्व बोध, सामाजिक समरसता, नागरिक शिष्टाचार, कुटुम्ब प्रबोधन और पर्यावरण के सूत्रों पर चलते हुए राष्ट्र निर्माण को प्राथमिकता दी गई है। देश और समाज के लिए सोचने वाले हर भारतवासी को पंच परिवर्तन के इन सूत्रों से अवश्य प्रेरणा मिलेगी।

मोहन जी के स्वभाव की एक और बड़ी विशेषता ये है कि वो मृदुभाषी हैं। उनमें सुनने की भी अद्‌भुत क्षमता है। यह विशेषता न केवल उनके दृष्टिकोण को गहराई देती है, बल्कि उनके व्यक्तित्व और नेतृत्व में संवेदनशीलता और गरिमा भी लाती है। वे हमेशा एक भारत श्रेष्ठ भारत के प्रबल पक्षधर रहे हैं।

संयोग से पीएम मोदी और सरसंघचालक डा. मोहन भागवत का 75वां जन्मदिन इसी कालखंड में सम्पन्न हुआ। इस प्रकार पिछले दिनों सम्पन्न इनका जन्मदिन इनकी हीरक जयंती थी। राष्ट्र को समर्पित इन दोनों के जीवन का यह अमृत महोत्सव भी माना जा रहा है। दूसरा अद्‌भुत संयोग यह है कि इस वर्ष संघ कार्य के सौ वर्ष पूरे हो रहे हैं। यानी 2025 के विजयादशमी से संघ का शताब्दी वर्ष शुरू हो रहा है। ऐसे अद्‌भुत संयोग को प्रकृति का संकेत माना जा रहा है। प्रकृति के इस संकेत का रहस्यभेदन शायद संघ के पांचवें सरसंघचालक श्रीसुदर्शनजी ने किया था।

आरएसएस के पांचवें सरसंघचालक श्रीसुदर्शनजी ने 18 सितम्बर 2006 को एक सभा में कहा था कि विवेकानंद ने 1894 में अपने गुरुभाइयों एवं मित्रों को पत्र लिखकर कहा था कि 1836 में श्रीरामकृष्ण परमहंस के जन्म के साथ युगसंधि काल शुरू हो गया है। युगसंधि काल 175 वर्षों का होता है। इस प्रकार युगसंधि काल 2011 में समाप्त हो जाएगा। जैसे दिन और रात के बीच संधिकाल उषा काल होता है उसी प्रकार युगों के बीच संधिकाल होता है। यह काल मानवता के लिए उथलपुथल भरा और कष्टपूर्ण होता है। 2011 में युगसंधि काल समाप्त होने के बाद भारत के भाग्य का सूर्योदय विश्व में होगा। इस प्रकार 21वीं सदी में भारत एक समर्थ देश के रूप में स्थापित होगा। सुदर्शनजी ने कई बार यह बात कही थी। संघ के द्वितीय सरसंघचालक श्रीगुरुजी के जन्मशती के अवसर पर पटना में एक कार्यक्रम भी उन्होंने बड़े आत्मविश्वास के साथ कहा था कि विरोधी विचारधारा और भारत को हमेशा मानसिक गुलाम बनाए रखने की इच्छा रखने वाली शक्तियां भारत की आध्यात्मिक उर्जा से नष्ट होने वाली हैं।

आरएसएस के पांचवें सरसंघचालक श्री सुदर्शन जी ने 78 वर्ष की उम्र में मार्च 2009 में स्वयं को मुक्त करते हुए डा. मोहन भागवत को सरसंघचालक के पद पर नियुक्त करने की घोषणा की थी। इस प्रकार स्वेच्छा से सरसंघचालक के अपने पदमुक्त होने व अपने मनोनुकूल को अपना उतराधिकारी नियुक्त करने की शानदार परंपरा आरएसएस में जारी है।

जब श्रीकृष्ण और अर्जुन के बिम्ब के माध्यम से तथ्य को प्रस्तुत करने का प्रयास हो रहा है तो इसमें युद्ध और युद्ध भूमि का जिक्र भी आवश्यक हो जाता है। यह युद्ध भारत के अस्तित्व की रक्षा के लिए है जो भारत की भूमि पर ही लड़ा जा रहा है। इस प्रकार सम्पूर्ण भारत कुरुक्षेत्र है। इस कुरूक्षेत्र में उस सनातन धर्म की पुनर्स्थापना के लिए युद्ध हो रहा है जिससे सम्पूर्ण विश्व में शांति और आनंद की स्थापना होगी। मनुष्य को मनुष्य बनाए रखने वाला यह युद्ध है। विश्व में अपना साम्राज्य स्थापित करने के प्रयास में लगी शक्तियां चार प्रकार की है। इसमें प्रथम इवेजेलिकल शक्ति है जो सम्पूर्ण विश्व को इसाई बनाने का सपना देखती है। इसके कार्य को आगे बढ़ाने वाली शक्ति का नाम है ग्लोबल मार्केट। ग्लोबल मार्केट शक्ति भारत की 140 करोड़ की आबादी को विश्व के सबसे बड़े बाजार के रूप में देखती है। इवेजेलिकल शक्ति के सहारे यह भारत में उपभोक्तावादी संस्कृति को बढ़ावा देने की योजना में लगी है। इस योजना को सफल बनाने के लिए यह भारत की सर्वसमावेशी संस्कृति को समाप्त करने में लगी है। भारत की

प्राचीन संस्कृति और प्रकृति पर प्रहार करने वालों में तीसरी कट्टर इस्लामिक शक्ति है। इन तीनों के अलावा चौथी शक्ति है जिसे वामपंथ कहा जाता है। भारत के बाहर ये चारो आपस में लड़ते–झगड़ते रहते हैं। लेकिन, विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश भारत को अस्थिर ओर कमजोर करने के लिए ये चारो मिलकर काम कर रहे हैं।

देशी–विदेशी मीडिया में संघ को लेकर जिस प्रकार की बातें लिखी और दिखायी जाती रही है उसका प्रभाव भारतीय जनमानस पर स्पष्ट दिखता है। भारत में भी यह मान लिया गया है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और बीजेपी एक ही है। व्यक्ति निर्माण के माध्यम से समाज और व्यवस्था परिवर्तन में लगे रहने वाले संघ को विपक्ष दुष्प्रचार का भी खामयाजा भुगतना पड़ा है। इससे इनकार नहीं किया जा सकता है कि बीजेपी में संघ के स्वयंसेवकों की संख्या अधिक है। इसके कारण बीजेपी संघ के अत्यंत करीब दिखता है। इसके साथ यह भी सच्चाई है कि भारत के अन्य राजनीतिक दलों में भी संघ के स्वयंसेवक कार्य कर रहे हैं।

आरएसएस और भाजपा के कार्यकर्ता आपस में इस तरह घुले मिले हैं कि ये कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि ये दो जिस्म एक जान हैं। पर ऐसा भी नहीं है कि दोनों एक ही है। इनमें मतभेद भी होते रहे हैं। विशेषता यह रही है कि बहुत शीघ्र दोनों ही संगठनों के जिम्मेदार अधिकारी आपसी संवाद से सबकुछ सामान्य करते रहे हैं।

इस वर्ष स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर पीएम मोदी ने राष्ट्र को संबोधित करने के क्रम में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का भी जिक्र किया। आरएसएस पर आने से पहले मोदी ने कहा, ''हमारा स्पष्ट मत है, ये देश सिर्फ सरकारें नहीं बनाती हैं, ये देश राजसत्ता पर विराजमान लोग ही नहीं बनाते हैं, ये देश शासन की विधा संभालने वाले नहीं बनाते हैं। ये देश बनता है कोटि–कोटि जनों के पुरुषार्थ से, ऋषियों के, मुनियों के, वैज्ञानिकों के, शिक्षकों के, किसानों के, जवानों के, सेना के, मजदूरों के, हर किसी के प्रयास से देश बनता है। हर किसी का योगदान होता है. व्यक्ति का भी होता है, संस्थाओं का भी होता है।''

इसके बाद प्रधानमंत्री ने आरएसएस के बारे में बात करते हुए कहा, ''आज मैं बहुत गर्व के साथ एक बात का जिक्र करना चाहता हूं. आज से सौ साल पहले एक संगठन का जन्म हुआ, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, सौ साल की राष्ट्र की सेवा का एक बहुत ही गौरवपूर्ण स्वर्णिम पृष्ठ है।''

उन्होंने कहा कि व्यक्ति निर्माण से राष्ट्र निर्माण के संकल्प को लेकर के, सौ साल तक मां भारती का कल्याण का लक्ष्य लेकर के, लक्ष्यावधि स्वयंसेवकों ने मातृभूमि के कल्याण के लिए अपना जीवन समर्पित किया है। अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए पीएम मोदी ने कहा कि सेवा, समर्पण, संगठन और अप्रतिम अनुशासन, यह जिसकी पहचान रही है, ऐसा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ दुनिया का यह सबसे बड़ा एनजीओ है एक प्रकार से, सौ साल का उसका समर्पण का इतिहास है। मैं आज यहां लाल किले के प्राचीर से सौ साल की इस राष्ट्र सेवा की यात्रा में योगदान करने वाले सभी स्वयंसेवकों को आदरपूर्वक स्मरण करता हूं और देश गर्व करता है राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की इस सौ साल की भव्य, समर्पित यात्रा को और हमें प्रेरणा देता रहेगा। लालकिले से उनका यह ऐतिहासिक भाषण एक घंटा 43 मिनट का था। अपने भाषण में 82 वी मिनट में उन्होंने संघ पर विचार रखा।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने लालकिले से अपने भाषण में 'घुसपैठियों' का जिक्र करते हुए स्पष्ट कहाकि यह भारत के लिए बड़ी चुनौती है। इसके तहत देश की जनसांख्यिकी (डेमोग्राफी) बदलने का घातक षडयंत्र किया जा रहा है।

गयाजी का पत्थर शिल्प बाजार

गया के अतरी क्षेत्र में अवस्थित पत्थरकट्टी गांव को बसाने का श्रेय इंन्दौर की महारानी अहिल्याबाई होल्कर को जाता है। 1763 से 1794 के बीच अहिल्याबाई होल्कर ने अनेक हिन्दू मंदिरों का निर्माण और जीर्णोद्धार कराया जिनमें बनारस का काशी–विश्वनाथ मंदिर, अन्नपूर्णा मंदिर और गया का प्रसिद्ध विष्णुपद मंदिर प्रमुख हैं। विष्णुपद मंदिर के पुनर्निमाण के लिए अहिल्याबाई होल्कर के कहने पर करीब 1300 गौड़ ब्राह्मण शिल्पी जयपुर से गया आए और पत्थरकट्टी में बसे। मंदिर निर्माण के बाद कुछ शिल्पी वापस जयपुर लौट गये और कुछ पत्थरकट्टी में ही स्थायी रूप से बस गये। अहिल्याबाई होल्कर के गुजरने के बाद पत्थरकट्टी के पाषाण शिल्पियों को अटारी महाराज एवं उनके समक्षक अन्य राजाओं, जमींदारों का संरक्षण मिला और यह संरक्षण बीसवी सदी के पूर्वार्ध तक जारी रहा।

पत्थरकट्टी के पाषाण शिल्पी तब न केवल पत्थर की छोटी–छोटी मूर्तियां बना रहे थे, प्रस्तर–पात्र भी बना रहे थे। जैसे – कप–प्लेट, गिलास, कटोरे, थालियां आदि। धार्मिक मूर्तियों में विष्णु, शिव और पंचदेव की मूर्तियां प्रमुख थीं। इनकी खपत स्थानीय बाजार के साथ–साथ पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र और राजस्थान में थी। 1930 के दशक में स्वतंत्रता आंदोलन तेज होने और 1939 में विश्वयुद्ध छिड़ने के बाद किंचित कारणों से मूर्तियों एवं प्रस्तर–पात्रों का बाजार तेजी से गिरा जिससे 1940 के दशक के अंत तक उनकी स्थिति अत्यंत नाजुक हो गयी। इस स्थिति का फायदा उन व्यापारियों ने उठाया जो उनसे मूर्तियां एवं पात्रों को खरीदकर बेचा करते थे। गया के खुदरा विक्रेता शिल्पकारों को उनकी लागत मूल्य से भी कम मूल्य पर सामान बेचने के लिए विवश करने लगे थे। नतीजतन, पत्थरकट्टी के शिल्पियों ने एक–एक करके मूर्तियां गढ़ना बंद कर दिया। 1947–48 में गया के बाजार में प्रस्तर के सिर्फ दो उत्पाद उपलब्ध थे। एक, खरल–मूसल जिसका उपयोग जड़ी–बूटियों को पीसने या कूटने के काम में किया जाता था और दूसरा, शिवलिंग की छोटी–बड़ी मूर्तियां। अत्यंत प्रतिकूल परिस्थितियों से बेहाल शिल्पकारों ने तब स्थानीय प्रशासन से गुहार लगायी कि उन्हें कुछ रुपयों की मदद दी जाये ताकि वे जयपुर लौट सकें, जहां से अहिल्याबाई होल्कर उन्हें लेकर आयी थीं।

गौड़ ब्रह्मण पाषाण शिल्पियों के पलायन का यह तीसरा दौर था।

17वीं सदी के मध्य में मुस्लिम शासकों से प्रताड़ित होकर उन्होंने बंगाल से जयपुर पलायन किया था। 18वीं सदी के उत्तरार्ध में अहिल्याबाई होल्कर के

कहने पर वे जयपुर से गया आये थे और अब उन्हें फिर जयपुर लौटने के लिए विवश थे। शिल्पियों की गुहार से चिंतित तत्कालीन जिलाधिकारी जे. सी. माथुर (15.08.1947 – 09.04.1949) ने उन्हें पुनर्वास और पाषाण शिल्प उद्योग को खड़ा करने में मदद देने का भरोसा दिलाया और फौरी मदद के तौर पर शिल्पियों को 32 बोरी गेहूं दिये, जिसकी चर्चा 1961 की जनगणना रिपोर्ट में भी की गयी है।

जे.सी. माथुर ने जाने–माने कलाकार और उद्योग विभाग (हस्तशिल्प), बिहार सरकार के उप–निदेशक उपेंद्र महारथी से तकनीकी सलाह और सहयोग की मांग की और दोनों ने पत्थरकट्टी में डेरा जमाकर शिल्पियों की परेशानियों को सुना और उनकी समस्याओं के निवारण की योजना बनायी जिसमें डिजाइन और तकनीकी मदद पहुंचाने, पत्थर उपलब्ध कराने और तैयार शिल्प के विपणन में मदद भी शामिल था। स्थानीय प्रशासन ने उन योजनाओं पर अमल किया जिससे शिल्पियों को राहत मिली। दूसरा महत्वपूर्ण प्रयास 1952 में हुआ, जब भगवानदास गौड़ के नेतृत्व में पाषाण शिल्पियों ने 'पाषाण कलाकार सहयोग समिति' बनायी। भगवानदास गौड़ इस समिति के पहले अध्यक्ष बने। सहयोग समिति बनने से पाषाण शिल्पियों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ क्योंकि समिति को अपने बनाये शिल्प का मूल्य तय करने का अधिकार था। इससे लगभग सात वर्ष तक समिति से जुड़े कलाकारों को अच्छा मुनाफा हुआ। समिति ने गया के पंचमहल इलाके में अपनी एक दुकान भी बनायी थी। इस बीच शिल्पियों के बच्चों को प्रस्तर–पात्र एवं मूर्तियां बनाने के लिए उद्योग विभाग ने स्थानीय डाकबंगला में 'ट्यूशन क्लास' शुरू किया। ओडिशा के प्रसिद्ध मूर्तिकार ई. डंकन को ट्यूशन क्लास का पहला प्रशिक्षक नियुक्त किया गया। उन्होंने न केवल परंपरागत तरीके से बन रही मूर्तियों में नये डिजाइन शामिल किये, बल्कि नये उत्पादों को बनाने के लिए भी कलाकारों को प्रोरित किया। यथा दृ ऐश–ट्रे, पेपर–वेट, कप, फूलदान आदि। उनके नेतृत्व में बुद्ध, लक्ष्मी, सूर्य, सरस्वती और भगवान शिव की मूर्तियां बनीं और उन्होंने प्राचीन मूर्तियों की प्रतिमूर्तियां बनाने के लिए कलाकारों को प्रोत्साहित किया। इस समेकित कोशिश का परिणाम यह हुआ कि पत्थरकट्टी के पाषाण शिल्प की मांग कलकत्ता, देवघर, अलीगढ़, बनारस, लखनऊ, हरिद्वार से लेकर मद्रास तक होने लगी।

1959–60 तक सहकारी समिति अच्छे से चली और फिर आपसी मतभेदों का शिकार होती चली गयी। समिति के नियम के मुताबिक, शिल्पियों को अपने उत्पाद वाजिब दर पर समिति को देने थे। समिति उनका विपणन करती और मुनाफे का बंटवारा होता था। पचास के दशक के अंत में समिति के प्रभावशाली सदस्यों ने इसमें घालमेल किया। उन्होंने अपने बनाये उत्पादों को महंगी दर पर सीधे खुदरा व्यापारियों को बेचना शुरू किया जिससे समिति में दरार पड़ गयी। इसी समय 'हंसदेव पाषाण कलाकार फंड' बना। फंड निकट परिवारों के चंदे से बना था जिसका मकसद उन शिल्पियों को वर्किंग कैपिटल मुहैया कराना था जो पाषाण कलाकार सहकारी समिति के सहयोग के बगैर गया के व्यापारियों को अपना सामान बेचना चाहते थे। इससे शिल्पियों के बीच प्रतिस्पर्धा बढ़ी। फंड को गया के खुदरा व्यापारियों ने भी बढ़ावा दिया ताकि समिति के महत्व को घटाया सके। उन्होंने फंड से जुड़े शिल्पियों को भेदभावपूर्ण तरीके से ऋण दिये और उनके उत्पादों को अपनी खर्च पर पत्थरकट्टी से मंगाना शुरू किया। इससे शिल्पी माल ढुलाई के खर्च से भी मुक्त हो गये। इसका परिणाम हुआ कि शिल्पी फंड की तरफ ज्यादा आकर्षित हुए और 1961 में सहयोग समिति ने दम दोड़ दिया। इसके बाद खुदरा व्यापारी धीरे–धीरे मनमानी पर उतर आये और शिल्पकार धीरे–धीरे पूर्व की बदहाल स्थिति में आने लगे।

1961 में पत्थरकट्टी के 1226 पाषाण शिल्पियों में 141 गौड़ ब्राह्मण शिल्पी थे जो 27 परिवारों के सदस्य थे। उनमें 69 पुरुष और 72 महिलाएं थीं। मुख्य रूप से पुरुष शिल्प को गढ़ने का काम करते थे और महिलाएं कुछ हद तक पॉलिश के काम में उनकी मदद किया करती थीं। सभी 27 परिवारों के अपने घर थे। घर का दरवाजे आमतौर पर गांव के बीचो–बीच गुजरते रास्ते की तरफ खुलते थे। हर घर में सड़क की तरफ एक दालान होता था जो सड़क की तरफ खुला रहता था। दालान की मध्य दीवार पर घर के भीतर जाने का प्रवेश द्वारा होता था। ये दालान ही शिल्पकारों का कार्यशाला था। इनके अलावा तब 51 कार्यशालाएं ऐसी भी थीं जहां अलग–अलग परिवारों के पुरुष शिल्पी एक साथ बैठकर काम करते थे, हालांकि ऐसी कार्यशालाओं में अमूमन निकट संबंधी शिल्पी होते थे। तब जिन शिल्पियों की कार्यशालाएं महत्वपूर्ण मानी जाती थीं, उनमें धन्नालाल गौड़, तुलसीराम गौड़, शिवरथ गौड़, भगवान दास दौड़ शामिल हैं। आमतौर पर इन शिल्पियों के कार्यशालाओं में प्रस्तर–पात्र बना करते थे। कार्यशालाओं में प्रयुक्त उपकरणों पर सान चढ़ाने के लिए तब गांव में सिर्फ तीन भट्ठियां थीं जो तुलसीराम, छोटू राम और हरिप्रसाद गौड़ की कार्यशाला में थी। इन भट्ठियों का इस्तेमाल सामूहिक रूप से होता था।

गोविंदलाल गौड़, रामनिवास गौड़ और रामनारायण गौड़ 1960–70 के दशक में उन ख्यातिलब्ध शिल्पियों में थे जिन्हें ग्रेनाइट की मूर्तियों को गढ़ने में विशेषज्ञता हासिल थी। आमतौर पर शिव–पार्वती, सरस्वती, नटराज, गणेश, बुद्ध, पंचदेवता आदि की मूर्तियां मुख्य रूप से इनके द्वारा ही गढ़ी जाती थीं। पंचदेवता की मूर्ति आमतौर पर एक ग्रेनाइट की एक पैनल पर बनायी जाती थी और कई बार उन्हें अलग–अलग भी बनाया जाता था, जिसमें महादेव (शिवलिंग स्वरूप), पार्वती, गणेश, कृर्तमूर्त या कार्तिकेय और नंदी को साकार किया जाता था। गोविंदलाल गौड़ को तब नटराज की एक मूर्ति बनाने के लिए राज्य पुरस्कार के सम्मानित किया गया था। इनके ठीक बाद की पीढ़ी में नंदलाल गौड़, माधवलाल गौड़, रामनाथ गौड़, मोतीलाल गौड़, छोटूलाल गौड़ और हीरालाल गौड़ जैसे शिल्पकार शामिल हैं। इन कलाकारों में अब सिर्फ नंदलाल गौड़ जीवित हैं और जयपुर में रहते हैं।

पत्थरकट्टी के लिए 1970 का दशक महत्वपूर्ण है। 1972 में नवादा के गठन के बाद उसके पहले जिलाधिकारी नरेंद्र पाल सिंह ने पत्थरकट्टी के पाषाण शिल्प को एक बड़े उद्योग के रूप में देखा और उसके विकसित करने की कोशिश की। इसी समय पहली बार गांव में भारतीय स्टेट बैंक की शाखा खोली गयी ताकि पाषाण शिल्पियों को आसानी से ऋण मिल सके। नरेंद्र पाल सिंह के स्थानांतरण और 1981 में उपेंद्र महारथी के असामायिक निधन से पत्थरकट्टी के पाषाण शिल्प को धक्का लगा। यह वही दौर था जब बिहार में नक्सली गतिविधियां तेज थीं और पत्थरकट्टी उससे अछूता नहीं था। दबंगों ने भी बची–खुची खादानों पर कब्जा जमाना शुरू कर दिया था जिससे शिल्पियों की स्थिति लगातार खराब होती चली गयी। वर्तमान पीढ़ी के वरिष्ठ कलाकारों ने सत्तर के बाद के दशक को जीया है और उनके मुताबिक पत्थरकट्टी में पाषाण शिल्पियों के लिए स्थिति कभी अच्छी बन ही नहीं पायी। लिहाजा, एक–एक कर गौड़ शिल्पी पलायन करते चले गये। एमएसएमई डिजाइन क्लिनिक स्कीम, 2013 के तहत उपेंद्र महारथी शिल्प अनुसंधान संस्थान द्वारा जमा की गयी नीड एसेसमेंट सर्वे रिपोर्ट के मुताबिक, पत्थरकट्टी में सिर्फ चार गौड़ ब्राह्मण पाषाण शिल्पी परिवार बचे थे और जहां तक हमारी जानकारी है, अब परिवारों की संख्या सिमटकर सिर्फ तीन रह गयी है।

डा. हेडगेवार
राष्ट्र–चेतना के शिल्पी

बीसवीं सदी का आरंभिक भारत एक गहन वैचारिक, सामाजिक और राजनीतिक मंथन के दौर से गुजर रहा था। यह एक ऐसा युग था जब स्वतंत्रता संग्राम की धाराएं विभिन्न दिशाओं में प्रवाहित हो रही थीं, सामाजिक सुधारों की बहसें तीव्र थीं और 'राष्ट्र' की परिभाषा को लेकर विविध दृष्टिकोण टकरा रहे थे। इसी उथल–पुथल भरे परिदृश्य में डा. केशव बलिराम हेडगेवार की राष्ट्रोन्मुख सोच का उदय हुआ। उनकी विचारधारा किसी शून्य में उत्पन्न नहीं हुई, बल्कि यह तत्कालीन राष्ट्रीय धाराओं, क्रांतिकारी आंदोलनों और मुख्यधारा के स्वतंत्रता संग्राम की अपूर्णता के प्रति एक सीधी प्रतिक्रिया थी। उनकी सोच को समझने के लिए उस युग की जटिलताओं को समझना अनिवार्य है, जिसने उनके विचारों को आकार दिया और उन्हें एक वैकल्पिक मार्ग खोजने के लिए प्रेरित किया।

डा. हेडगेवार का जन्म 1889 में हुआ था, जो उन्हें उस पीढ़ी में स्थापित करता है जो स्वतंत्रता संग्राम के सबसे गहन दौर के बीच वयस्क हुई। यह वह समय था जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का

प्रभुत्व था, लेकिन साथ ही बंगाल और महाराष्ट्र में क्रांतिकारी आंदोलन भी अपनी जड़ें जमा रहे थे। समाज सुधारक जाति–प्रथा, महिला शिक्षा और अन्य सामाजिक कुरीतियों पर बहस कर रहे थे। राजनीतिक स्वतंत्रता और सामाजिक पुनर्जागरण के ये दोहरे सूत्र भारतीय विमर्श पर हावी थे। इसी परिवेश ने डॉ. हेडगेवार के युवा मन पर गहरा प्रभाव डाला और उनके भविष्य के मार्ग की नींव रखी।

डा. हेडगेवार के राष्ट्रवादी विचारों की जड़ें उनके छात्र जीवन से ही गहरी थीं। नागपुर में अपनी प्रारंभिक शिक्षा के दौरान 'वंदे मातरम' गाने के कारण उन्हें स्कूल से निष्कासित कर दिया गया, जो ब्रिटिश शासन के प्रति उनके विद्रोही स्वभाव का प्रारंभिक प्रमाण था। उच्च शिक्षा के लिए जब वे कलकत्ता गए, जो उस समय क्रांतिकारी राष्ट्रवाद का गढ़ था, तो वे अनुशीलन समिति जैसे प्रमुख क्रांतिकारी संगठनों के संपर्क में आए। यह केवल एक युवा उत्साह नहीं था, बल्कि एक ऐसा अनुभव था जिसने उनमें अनुशासन, संगठन और आत्म–बलिदान के मूल्यों को गहराई से स्थापित किया। इन क्रांतिकारी गतिविधियों ने उन्हें यह सिखाया कि केवल भावनाएं पर्याप्त नहीं होतीं, बल्कि एक संगठित और अनुशासित शक्ति के बिना कोई भी संघर्ष सफल नहीं हो सकता।

क्रांतिकारी मार्ग की सीमाओं को महसूस करते हुए, डा. हेडगेवार ने मुख्यधारा की राजनीति में भाग लेने का निर्णय लिया। वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से जुड़ गए और सक्रिय रूप से काम किया। इसी बीच 1919–1924 का खिलाफत आंदोलन उनके लिए एक निर्णायक मोड़ साबित हुआ। उन्होंने देखा कि कांग्रेस द्वारा तुर्की के खलीफा के पद को बचाने के लिए चलाए गए इस आंदोलन ने राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने के बजाय सांप्रदायिक विभाजन को और गहरा कर दिया। आंदोलन के बाद हुए सांप्रदायिक दंगों ने उन्हें यह विश्वास दिलाया कि राजनीतिक लक्ष्यों के लिए धार्मिक भावनाओं का उपयोग करना राष्ट्रीय एकता के लिए घातक था। उन्हें यह महसूस हुआ कि कांग्रेस की नीतियां सतही राजनीतिक समझौतों पर आधारित थीं और वे समाज की अंतर्निहित कमजोरियों को दूर करने में विफल रहीं।

यह मोहभंग एक गहन पुनर्विचार का कारण बना। डा. हेडगेवार का वैचारिक विकास एक विशिष्ट प्रक्षेपवक्र को दर्शाता है। पहले क्रांतिकारी कार्रवाई, फिर मुख्यधारा की राजनीतिक भागीदारी, और अंततः दोनों से मोहभंग होकर एक वैकल्पिक, सांस्कृतिक रूप से निहित मार्ग की खोज। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि समस्या स्वतंत्रता के लक्ष्य में नहीं, बल्कि उसे प्राप्त करने की विधि और नींव में थी। न तो गुप्त हिंसा और न ही शीर्ष–स्तरीय राजनीतिक सौदेबाजी तब तक सफल हो सकती है, जब तक कि समाज की आंतरिक दुर्बलता, विघटन और आत्म–विस्मृति की मूलभूत समस्या का समाधान नहीं कर लिया जाता। इसी निष्कर्ष ने उन्हें एक ऐसे संगठन की स्थापना के लिए प्रेरित किया जो राजनीति से दूर रहकर चरित्र–निर्माण और समाज–संगठन पर ध्यान केंद्रित करे।

भारत का सौभाग्य गहरे अंधकार से बाहर निकल रहा था। उसी कालखंड में वर्ष 1989 में नागपुर में डा.हेडगेवार का जन्म हुआ। उधर तीरथराज प्रयाग की भूमि पर उसी वर्ष भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का भी जन्म हुआ था।

डा. हेडगेवार के व्यक्तिगत और वैचारिक विकास को उनके समय की प्रमुख ऐतिहासिक घटनाओं से जोड़कर विधाता भविष्य के महान इतिहास के बारे में सेकेत दे रहे थे। खिलाफत आंदोलन के पतन (1922–24) के ठीक बाद नागपुर में 1925 में आरएसएस की स्थापना से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह एक आकस्मिक घटना नहीं, बल्कि विशिष्ट घटनाओं के प्रति एक सुविचारित प्रतिक्रिया थी।

डा. हेडगेवार के राष्ट्रोन्मुख विचार का दार्शनिक मर्म 'राष्ट्र' की उनकी अनूठी संकल्पना में निहित

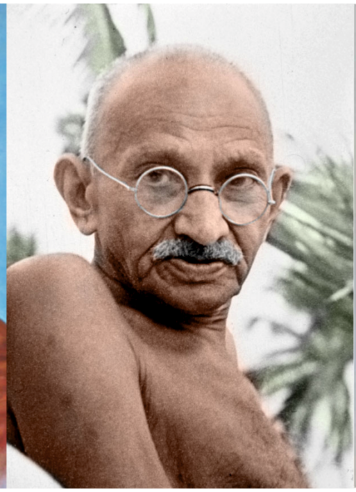

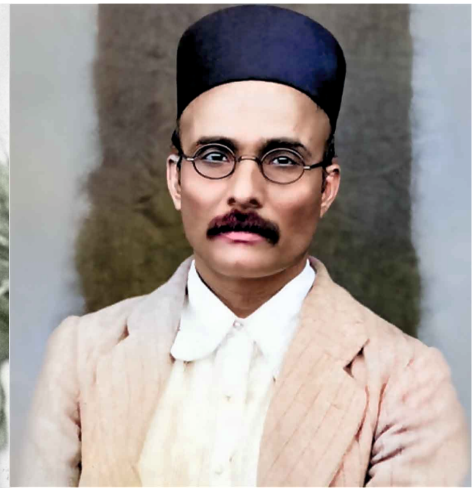

है। उनके लिए राष्ट्र केवल एक आधुनिक राजनीतिक निर्माण या भौगोलिक इकाई नहीं था, बल्कि एक प्राचीन, जीवंत और सभ्यतागत यथार्थ था, जो एक साझा सांस्कृतिक चेतना (चिति) द्वारा परिभाषित होता है।

उनके चिंतन में 'राष्ट्र' (शाश्वत, सांस्कृतिक राष्ट्र) और 'राज्य' (अस्थायी, राजनीतिक सत्ता) के बीच एक स्पष्ट और मौलिक भेद है। यह भेद उनके द्वारा स्थापित संगठन के मूल 'अराजनीतिक' चरित्र को समझने के लिए सर्वोपरि है। उनके अनुसार, भारत एक 'प्राचीन राष्ट्र' है, न कि कोई ऐसा राष्ट्र जिसे बनाया जा रहा हो। राष्ट्र अपनी संस्कृति, परंपराओं और लोगों के साथ अनादि काल से अस्तित्व में है। इसके विपरीत, 'राज्य' या सरकारें तो आती–जाती रहती हैं। वे केवल राष्ट्र की इच्छा को व्यक्त करने का एक साधन मात्र हैं। राष्ट्र का अस्तित्व किसी भी राज्य या शासन प्रणाली से स्वतंत्र और श्रेष्ठ है।

'चिति' और 'हिंदुत्व' राष्ट्र की आत्मा

डा. हेडगेवार का मानना था कि भारतीय राष्ट्र एक सामान्य सांस्कृतिक–आध्यात्मिक सार से बंधा हुआ है, जिसे उन्होंने 'हिंदुत्व' या 'हिदू–पन' के रूप में पहचाना। उनके लिए, यह केवल एक पूजा–पद्धति या धर्म नहीं था, बल्कि एक संपूर्ण जीवन–दृष्टि थी, जिसमें इस भूमि पर विकसित हुए सभी दर्शन, मूल्य और जीवन–पद्धतियां शामिल थीं। भारत राष्ट्र की पहचान उसकी 'सनातन संस्कृति और जीवन मूल्यों' से अविभाज्य रूप से जुड़ी हुई है। यही सांस्कृतिक आधार, जिसे 'चिति' या राष्ट्र की आत्मा कहा जा सकता है, देश के विभिन्न समुदायों को एक सूत्र में पिरोता है। राष्ट्र का मूल आधार 'अपने देश की संस्कृति और लोग' हैं।

उनकी दृष्टि में 'अखंड भारत' की कल्पना केवल एक राजनीतिक आकांक्षा नहीं थी, बल्कि संपूर्ण उपमहाद्वीप की अंतर्निहित सांस्कृतिक एकता में एक गहरा विश्वास था। हिमालय से लेकर महासागर तक की यह भूमि एक अविभाज्य सांस्कृतिक इकाई थी। उनका ध्यान उन सभी निवासियों के बीच एकता और अपनेपन की भावना को बढ़ावा देने पर था जो इस साझा सभ्यतागत विरासत से अपनी पहचान जोड़ते थे।

औपनिवेशिक नैरेटिव का प्रतिकार

डा. हेडगेवार की 'राष्ट्र' की यह संकल्पना अपने बौद्धिक ताने–बाने में मूलतः उपनिवेशवाद–विरोधी है। औपनिवेशिक इतिहासकारों ने अक्सर यह नैरेटिव गढ़ा कि भारत कभी एक राष्ट्र था ही नहीं, बल्कि यह केवल एक भौगोलिक अभिव्यक्ति या

विभिन्न समुदायों का एक बिखरा हुआ समूह था जिसे केवल ब्रिटिश शासन ने एकीकृत किया। इसके विपरीत, डा. हेडगेवार का भारत को एक 'प्राचीन राष्ट्र' और 'सनातन संस्कृति' पर आधारित बताने पर निरंतर जोर देना इस औपनिवेशिक नैरेटिव का सीधा बौद्धिक प्रतिकार था। इस दृष्टिकोण से, उनका उद्देश्य केवल अंग्रेजों से राजनीतिक स्वतंत्रता (राज्य) प्राप्त करना नहीं था, बल्कि एक अधिक गहन 'सभ्यतागत वि–उपनिवेशीकरण' प्राप्त करना था। यह राष्ट्र की एक स्वदेशी परिभाषा को पुनः प्राप्त करने और उसे पुनः स्थापित करने का एक प्रयास था, जो भारतीय मानस और उसकी आत्म–छवि को औपनिवेशिक प्रभावों से मुक्त कर सके।

महात्मा गांधी और सावरकर जैसे उस कालखंड के प्रमुख चिंतकों को सामने रखकर जब सावरकर के वैचारिक अधिष्ठान और कार्यपद्धति पर विचार करते हैं तो वैसे सूक्ष्म भेद स्पष्ट नजर आने लगते हैं जिसकी अनदेखी होती रही है। सावरकर का ध्यान मुख्य रूप से राज्य सत्ता पर कब्जा करने पर था, वहीं हेडगेवार का पूरा जोर 'व्यक्ति निर्माण' और एक दीर्घकालिक सांस्कृतिक परियोजना के माध्यम से समाज को बदलने पर था। इसी तरह, उनका सांस्कृतिक राष्ट्रवाद गांधी के समन्वयवादी, आस्था–आधारित राष्ट्रवाद से भिन्न था। यह दर्शाता है कि 'हिंदू राष्ट्रवाद' कोई एकाश्मक विचारधारा नहीं थी, बल्कि इसमें रणनीति और प्राथमिकता को लेकर महत्वपूर्ण आंतरिक भिन्नताएं थीं।

डा. हेडगेवार का मानना था कि भारत की पराधीनता का मूल कारण कोई बाहरी शक्ति नहीं, बल्कि हिन्दू समाज की आंतरिक कमजोरियां थीं। उनका निदान मुख्य रूप से आत्म–विश्लेषणात्मक था, जो बाहरी दुश्मन के बजाय समाज की अपनी दुर्बलताओं पर केंद्रित था। उन्होंने तर्क दिया कि एक संगठित और शक्तिशाली समाज को कोई भी बाहरी शक्ति लंबे समय तक गुलाम नहीं बना सकती।

उनके विश्लेषण में, हिंदू समाज की सबसे बड़ी कमजोरी उसका आंतरिक विघटन था, विशेष रूप से जातिगत भेदभाव और अस्पृश्यता। उन्होंने 'आपसी फूट, जातिगत भेदभाव, और अनुशासनहीनता' को राष्ट्र के पतन का मुख्य कारण माना। उनका मानना था कि इन विभाजनों ने समाज को भीतर से खोखला कर दिया था, जिससे यह विदेशी आक्रमणकारियों के सामने कमजोर पड़ गया। एक ऐसा समाज जो स्वयं अपने ही भीतर विभाजित हो, वह कभी भी एकजुट होकर बाहरी चुनौतियों का सामना नहीं कर सकता। यह एक आत्म–प्रदत्त घाव था जिसने सदियों की गुलामी का मार्ग प्रशस्त किया।

सदियों की पराधीनता का एक और गंभीर परिणाम था–आत्मविस्मृति। डा. हेडगेवार का मानना था कि हिन्दू समाज अपने गौरवशाली इतिहास, अपनी उपलब्धियों और अपनी अंतर्निहित शक्ति को भूल चुका है। इस आत्म–विस्मृति ने एक 'मनोवैज्ञानिक कमजोरी' या दासता की मानसिकता को जन्म दिया। लोग अपनी राष्ट्रीय पहचान के प्रति उदासीन हो गए थे और उनमें सामूहिक चेतना का अभाव था। इसलिए, उनका एक प्रमुख उद्देश्य इस सोई हुई 'राष्ट्रीय चेतना' को फिर से जगाना था।

संगठन की शक्ति

अपने राजनीतिक और क्रांतिकारी अनुभवों से डा. हेडगेवार ने यह निष्कर्ष निकाला कि हिन्दू समाज, अपनी विशाल संख्या के बावजूद, कमजोर था क्योंकि वह असंगठित और अनुशासनहीन था। उन्होंने बार–बार इस बात पर जोर दिया कि 'संगठन में ही शक्ति है'। व्यक्तिगत वीरता के कई उदाहरण होने के बावजूद, एक संगठित और अनुशासित सामूहिक चरित्र की कमी एक महत्वपूर्ण विफलता थी जिसे तत्काल ठीक करने की आवश्यकता थी।

डॉ. हेडगेवार के इस निदान ने राष्ट्रवादी समस्या–कथन को मौलिक रूप से बदल दिया। उनके कई समकालीनों के लिए, समस्या 'अंग्रेज'

थे। लेकिन, हेडगेवार के लिए, समस्या 'हम' यानी हिन्दू समाज की आंतरिक स्थिति थे। अंग्रेज इस गहरी बीमारी का केवल एक लक्षण थे। इस दृष्टिकोण का एक गहरा निहितार्थ था कि यदि अंग्रेज चले भी जाते, तो एक कमजोर और विभाजित समाज या तो किसी अन्य शक्ति द्वारा जीत लिया जाता या आंतरिक कलह में ढह जाता। इसलिए, उनका प्राथमिक लक्ष्य ब्रिटिश–विरोधी आंदोलन नहीं, बल्कि समाज का पुनर्निर्माण था। यह बताता है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अपने शुरुआती दशकों में प्रत्यक्ष स्वतंत्रता संग्राम से अलग क्यों रहा। एक ऐसा बिंदु जिस पर तब और आज भी बहुत राजनीतिक बहस होती है। उनका ध्यान बीमारी के इलाज पर था, न कि केवल लक्षण पर।

समाज की समस्याओं के निदान के लिए डा. हेडगेवार ने एक व्यावहारिक और दीर्घकालिक समाधान प्रस्तुत किया। वह समाधान राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के रूप में सामने आया। 1925 में विजयादशमी के दिन संघ की स्थापना किसी तात्कालिक राजनीतिक प्रतिक्रिया के रूप में नहीं, बल्कि राष्ट्रीय पुनर्जागरण के लिए एक सदियों लंबे दृष्टिकोण के साथ की गई थी। यह उनके उस

विश्वास का मूर्त रूप था कि एक मजबूत राष्ट्र का निर्माण मजबूत व्यक्तियों के निर्माण से ही संभव है।

संघ की स्थापना

संघ की स्थापना डा. हेडगेवार की हिंदू समाज को संगठित करने के लिए एक प्रभावी पद्धति की लंबी खोज का परिणाम थी। उन्होंने इसे एक धीमी, धैर्यवान और जमीनी स्तर की प्रक्रिया के रूप में डिजाइन किया, जिसका उद्देश्य भाषणों या प्रस्तावों के माध्यम से नहीं, बल्कि दैनिक अभ्यास के माध्यम से समाज के ताने–बाने को बदलना था।

डा. हेडगेवार के समाधान का मूल तत्व 'व्यक्ति निर्माण' (चरित्र–निर्माण) की अवधारणा थी। उनका दृढ़ विश्वास था कि एक मजबूत राष्ट्र केवल नैतिक रूप से मजबूत, अनुशासित और राष्ट्र के प्रति निस्वार्थ रूप से समर्पित व्यक्तियों द्वारा ही बनाया जा सकता है। अंतिम लक्ष्य एक 'सुसंगठित और अनुशासित समाज' का निर्माण करना था, और इसकी शुरुआत व्यक्ति के परिवर्तन से होनी थी। यह एक ऐसा दृष्टिकोण था जो राजनीतिक क्रांति के बजाय सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन को प्राथमिकता देता था।

'व्यक्ति निर्माण' के इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए डा. हेडगेवार ने 'शाखा' (दैनिक रचनात्मक मिलन) को मुख्य साधन के रूप में विकसित किया। शाखा संगठन की मूल 'इकाई' के रूप में विकसित की गयी। यह केवल एक सभा नहीं, बल्कि एक सामाजिक तकनीक थी जिसे दैनिक, अनुष्ठानिक दिनचर्या के माध्यम से अनुशासन, सौहार्द, शारीरिक क्षमता विकास और वैचारिक प्रतिबद्धता के मूल्यों को स्थापित करने के लिए डिजाइन किया गया था। खेल, प्रार्थना, बौद्धिक चर्चा और शारीरिक व्यायाम जैसी सरल गतिविधियों के माध्यम से, शाखा का उद्देश्य जातिगत भेदों को मिटाना और जमीनी स्तर पर एक एकीकृत हिन्दू पहचान का निर्माण करना था। शारीरिक प्रशिक्षण पर जोर समाज की कथित शारीरिक कमजोरी का मुकाबला करने और

आत्मविश्वास पैदा करने के लिए था।

इस प्रक्रिया के माध्यम से, डा. हेडगेवार 'स्वयंसेवक' यानी स्व–प्रेरित कार्यकर्ता का एक आदर्श कैडर बनाना चाहते थे। एक स्वयंसेवक वह व्यक्ति है जो राष्ट्र को स्वयं से ऊपर रखता है, अपने दैनिक जीवन में अनुशासन का अभ्यास करता है, और बिना किसी पुरस्कार या मान्यता की अपेक्षा के सामाजिक सामंजस्य के लिए निस्वार्थ भाव से काम करता है। निस्वार्थ सेवा की यह अवधारणा उनके दृष्टिकोण के केंद्र में थी।

शाखा की कार्यप्रणाली सामाजिक मनोविज्ञान की गहरी समझ को दर्शाती है। डा. हेडगेवार ने यह पहचाना कि गहरे बैठे मूल्य और पहचान केवल बौद्धिक अनुनय से नहीं बदलते, बल्कि निरंतर, साक्षात अभ्यास और सामुदायिक बंधन के माध्यम से बदलते हैं। शाखा वास्तव में पुनः–समाजीकरण का एक तंत्र है। इसकी गतिविधियों में खेल, शारीरिक व्यायाम, गीत, कहानियां, विश्वास, अनुशासन और अपनेपन की भावना का निर्माण करने की स्वाभाविक प्रवृति है। यह जाति जैसी पूर्व पहचानों से ऊपर उठती हैं। उन्होंने सामाजिक सुधार पर जटिल सैद्धांतिक बहसों को दरकिनार कर दिया। इसके बजाय, उन्होंने एक व्यावहारिक, दैनिक अनुभव बनाया जहां एक साझा दिनचर्या और एक नई, सर्वोपरि 'स्वयंसेवक' पहचान के सामने जातिगत मतभेद अप्रासंगिक हो गए। वे मन बदलने के लिए व्यवहार बदल रहे थे, न कि व्यवहार बदलने के लिए मन। यह केवल उपदेश देने की तुलना में सामाजिक परिवर्तन के लिए एक कहीं अधिक सूक्ष्म और दीर्घकालिक रूप से प्रभावी रणनीति थी।

सामाजिक दृष्टिकोण व विचार

डा. हेडगेवार का सामाजिक दृष्टिकोण उनके राष्ट्रीय संगठन के लक्ष्य के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ था। उन्होंने उन सभी सामाजिक कुरीतियों का विरोध किया जो हिन्दू समाज की एकता में बाधक थीं, जिनमें अस्पृश्यता सबसे प्रमुख थी। हालांकि, उनके सुधार का स्वरूप और प्राथमिकताएं अक्सर अकादमिक और राजनीतिक बहस का विषय रही हैं।

डा. हेडगेवार ने अस्पृश्यता की प्रथा को हिन्दू समाज पर एक कलंक मानते हुए इसका स्पष्ट रूप से विरोध किया। उन्होंने यह सुनिश्चित करने के लिए सक्रिय रूप से काम किया कि संघ के भीतर जातिगत भेदभाव के लिए कोई जगह न हो। उनका प्रसिद्ध कथन था कि संघ में आने के बाद सभी केवल 'हिंदू' हैं, कोई अलग जाति नहीं। उन्होंने संघ के कार्यक्रमों में अंतर–जातीय भोजन को प्रोत्साहित किया और सभी के लिए पानी के स्रोतों को खोलने जैसे कदम उठाए, जो उस समय के लिए क्रांतिकारी थे। उनका लक्ष्य एक 'समरस समाज' का निर्माण करना था, जहां सभी घटक एक–दूसरे के साथ सद्भाव से रहें।

यहां एक महत्वपूर्ण विश्लेषण आवश्यक है। क्या डा. हेडगेवार का लक्ष्य डा. बी. आर. अम्बेडकर की तरह जाति व्यवस्था का पूर्ण उन्मूलन था, या उनका प्राथमिक उद्देश्य राष्ट्रीय संगठन के बड़े लक्ष्य के लिए विभिन्न जातियों के बीच एकता और सद्भाव यानी सामाजिक समरसता को बढ़ावा देना था। साक्ष्य बताते हैं कि उनका दृष्टिकोण व्यावहारिक था और कार्यात्मक एकता पर केंद्रित था। उन्होंने एक संयुक्त मोर्चा बनाने को प्राथमिकता दी। उनकी पद्धति जाति व्यवस्था की शास्त्रीय नींव पर सीधा, समाज–व्यापी हमला करने के बजाय, अपने संगठन के प्रभाव क्षेत्र के भीतर जाति को अप्रासंगिक बनाना था।

डा. हेडगेवार के जाति सुधार के दृष्टिकोण को 'साधनात्मक' या 'कार्यात्मक' कहा जा सकता है। उन्होंने अस्पृश्यता और जाति–आधारित भेदभाव का विरोध केवल इसलिए नहीं किया कि वे नैतिक रूप से गलत थे, बल्कि इसलिए भी कि वे उन्हें हिंदू 'राष्ट्र' की सबसे बड़ी रणनीतिक कमजोरी के रूप में देखते थे। उनका जातिवाद का हर विरोध राष्ट्र की कमजोरी और पतन के संदर्भ से जुड़ा हुआ है। इस प्रकार, उनके सुधार उनके प्राथमिक

लक्ष्य राष्ट्रीय संगठन के लिए एक आवश्यक पूर्व शर्त थे। यह 'साधनात्मक' दृष्टिकोण संघ के भीतर अस्पृश्यता के खिलाफ उनके प्रयासों की ईमानदारी और अम्बेडकर जैसे कट्टरपंथी, उन्मूलनवादी दृष्टिकोण से देखे जाने पर उनके दृष्टिकोण की संभावित सीमाओं, दोनों की व्याख्या करता है। यह सामाजिक क्रांति का धर्मशास्त्र नहीं, बल्कि राष्ट्रीय एकीकरण की रणनीति थी।

भारत में विचारधारा की निरंतरता और प्रभाव

1940 में डा. हेडगेवार के निधन के समय, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ एक अपेक्षाकृत छोटा संगठन था। लेकिन, उनकी विरासत उनके द्वारा स्थापित संगठन या उनके विचारों तक ही सीमित नहीं है। यह उस वैचारिक और संगठनात्मक पारिस्थितिकी तंत्र में निहित है जिसे उन्होंने बनाया, जो आज भी समकालीन भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक परिदृश्य को गहराई से प्रभावित कर रहा है।

डा. हेडगेवार के बाद, उनके उत्तराधिकारियों के नेतृत्व में संघ का एक छोटे समूह से एक राष्ट्रव्यापी आंदोलन के रूप में विस्तार हुआ, जिसके साथ कई संबद्ध संगठन जिन्हें सामूहिक रूप से विचार परिवार कहने की परम्परा विकसित हो गयी है। 'राष्ट्र', 'व्यक्ति निर्माण', और 'संगठन' के उनके मूल विचारों को उनके अनुयायियों द्वारा समय के साथ व्याख्यायित, अनुकूलित और लागू किया गया है। यह संगठन आज समाज के लगभग हर क्षेत्रों में व्याप्त है। शिक्षा, श्रम, राजनीति, सामाजिक सेवा, स्वास्थ्य सेवा, छात्र राजनीति, साहित्य, कला–संस्कृति, धर्म–अध्यात्म, भाषा, पत्रकारिता, स्वदेशी, पर्यावरण जैसे अनेक क्षेत्रों में इस विचार परिवार के संगठन न केवल सक्रिय बल्कि प्रभावी भी है।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की राजनीतिक

डा. हेडगेवार ने संघ की कल्पना एक अराजनीतिक, सांस्कृतिक संगठन के रूप में की थी। हालांकि, समय के साथ, संघ और चुनावी राजनीति के बीच एक जटिल और विकसित संबंध बना। 21वीं सदी में आंदोलन द्वारा प्राप्त महत्वपूर्ण राजनीतिक प्रभाव, 'समाज को फिर से बनाने' के मूलभूत लक्ष्य और 'राज्य चलाने' के हालिया लक्ष्य के बीच एक अंतर्निहित तनाव और तालमेल दोनों को दर्शाता है।

डा. हेडगेवार की विचारधारा का प्रभाव बहुआयामी रहा है जिसके कारण औपनिवेशिक मानसिकता वाले राजनीतिज्ञ और बुद्धिजीवी इसको लेकर वितंडा खड़ा करते रहे हैं। आजादी के बाद से ही ऐसे लोग इस विचार को विवादास्पद सिद्ध करने के प्रयास करते रहे हैं। एक ओर, इसके अनुयायी इसे सामाजिक सेवा, राष्ट्रीय एकीकरण और सांस्कृतिक गौरव को बढ़ावा देने का श्रेय देते हैं। दूसरी ओर, आलोचक राष्ट्रवाद की इसकी परिभाषा, धार्मिक अल्पसंख्यकों के प्रति इसके रुख और भारत के राजनीतिक ध्रुवीकरण में इसकी भूमिका को लेकर गंभीर प्रश्न उठाते हैं।

अंततः, डा. हेडगेवार की सबसे स्थायी विरासत एक स्व–प्रतिकृति वैचारिक और संगठनात्मक पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण है। 'व्यक्ति निर्माण' की प्रक्रिया ने समर्पित कार्यकर्ताओं की पीढ़ियों को तैयार किया है, जिन्होंने बदले में, उनके मूल विचारों को भारतीय जीवन के हर क्षेत्र में पहुंचाया है। यह विस्तार यादृच्छिक नहीं है। यह 'व्यक्ति निर्माण' प्रक्रिया का तार्किक परिणाम है। दशकों तक शाखा की विचारधारा से आकार पाए व्यक्ति स्वाभाविक रूप से उस विश्व–दृष्टि को अपने पेशेवर और सार्वजनिक जीवन में लागू करना चाहते हैं। इस प्रकार, आज देखी जाने वाली राजनीतिक सफलता स्वयं में लक्ष्य नहीं है, बल्कि लगभग एक सदी पहले उनके द्वारा रखी गई सांस्कृतिक और सामाजिक नींव का एक विलंबित परिणाम है। उनकी सच्ची विरासत एक राजनीतिक दल नहीं, बल्कि एक गहरा अंतर्निहित सांस्कृतिक और सामाजिक आंदोलन है जिसने अब महत्वपूर्ण राजनीतिक अभिव्यक्ति हासिल कर ली है।

उज्ज्वला योजना

उज्ज्वला योजना के तहत अब तक 10 करोड़ से ज्यादा महिलाओं को मुफ्त गैस कनेक्शन उपलब्ध कराए गए हैं। रसोई में धुएं से मुक्ति मिली और महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा मिला है। भारत में पहले करोड़ों घरों का चूल्हा लड़की या उपलों से जलता था, जिसके धुएं से उनकी सेहत पर भी बुरा प्रभाव पड़ता था, लेकिन अब ऐसा नहीं है। मोदी के प्रयासों से ही यह सम्भव हो पाया है।

तीन तलाक पर प्रतिबंध

पीएम मोदी 'सबका साथ, सबका विकास' का मंत्र लेकर आगे बढ़ते रहते हैं। यही वजह है कि पीएम मोदी ने तीन तलाक पर प्रतिबंध लगाने का फैसला किया। इसका मकसद मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करना था। यह एक ऐतिहासिक कानून है, जिसके पारित होने के बाद करोड़ों मुस्लिम महिलाओं के जीवन में बड़ा बदलाव आया है। तीन तलाक पर प्रतिबंध सामाजिक सुधार की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

RNI No.-BIHHIN/2003/12538 Postal Reg:R-10/NP-39/Patna GPO/26-28

गुड्स एंड सर्विसेज टैक्स (जीएसटी) का क्रियान्वयन

भारत जैसे विशाल देश में एक समान टैक्स लागू करना असंभव–सा लगता था, लेकिन इस असंभव काम को भी पीएम मोदी ने संभव कर दिखाया। गुड्स एंड सर्विसेज टैक्स का क्रियान्वयन से आज भारत में व्यापार करना बेहद आसान हो गया है। आज पूरे देश में एक समान टैक्स सिस्टम लागू है। ये पीएम मोदी ही हैं, जिन्होंने 'वन नेशन, वन टैक्स' की अवधारणा को साकार किया है। नेक्स्ट जेनेरेशन रिफॉर्म के जरिए पीएम मोदी ने टैक्स स्लैब की संख्या घटा कर जीएसटी की उपयोगिता का विस्तार किया है।

मेक इन इंडिया

मेक इन इंडिया के जरिए पीएम मोदी ने भारत को वैश्विक विनिर्माण हब बनाने की पहल की थी, जिसका मकसद विदेशी निवेश में बढ़ोतरी और रोजगार सृजन करना था। मेक इन इंडिया का उद्देश्य भारत में विनिर्माण क्षेत्र को बढ़ावा देना और देश को एक वैश्विक विनिर्माण केंद्र बनाना है। यह पहल डिफेंस क्षेत्र में निवेश को बढ़ावा देने और देश में डिफेंस विनिर्माण को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित करती है। पीएम मोदी का ये सपना आज साकार होता नजर आ रहा है। श्ऑपरेशन सिंदूरश के दौरान पूरी दुनिया ने स्वदेशी ब्रह्मोस और आकाशतीर मिसाइलों का लोहा मन। मेक इन इंडिया की वजह से ही आज कई विदेशी कंपनियां भारत में आकर अपना प्रोडक्ट बना रही हैं।

आयुष्मान भारत योजना

आयुष्मान भारत योजना गरीब परिवारों को 5 लाख रुपये तक की मुफ्त स्वास्थ्य बीमा लाभ की सुविधा देती है। ये गरीबों के लिए किसी वरदान से कम नहीं है। इस योजना के तहर गरीब परिवारों के लोग भी प्राइवेट हॉस्पिटल में जाकर 5 लाख रुपये तक का इलाज करा सकते हैं। इसके लिए उन्हें कोई पैसा नहीं देना होता है। ये दुनिया की सबसे बड़ी सरकारी हेल्थकेयर योजना मानी जाती है।

डाक टिकट

पता